कैसे करें वर्ष भर हरा चारा उत्पादन

राकेश पाण्डे
पुतान सिंह

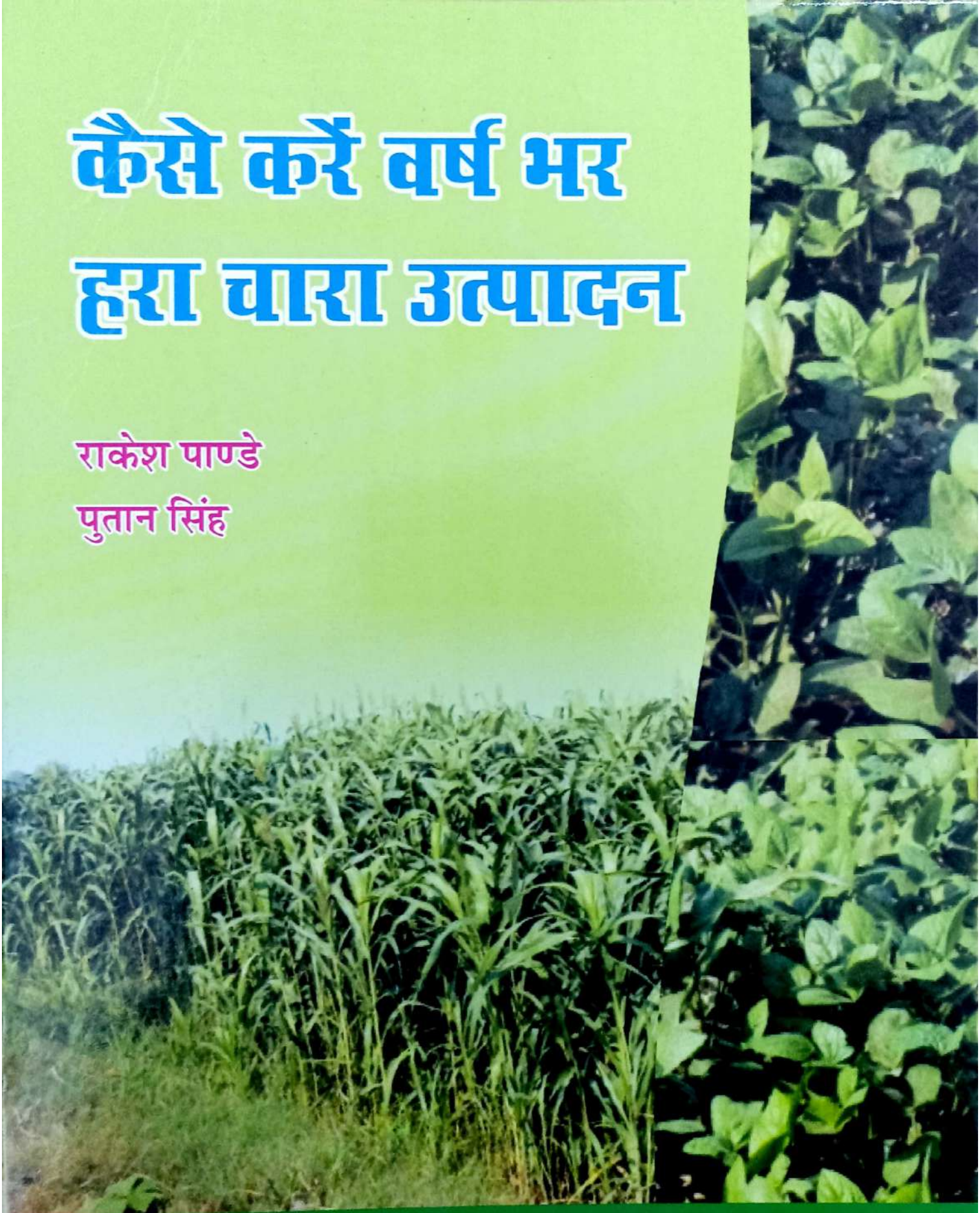

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र
संयुक्त निदेशालय (प्रसार शिक्षा)
भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान
इज्जतनगर-243122 (उ.प्र.)

कैसे करें वर्ष भर हरा चारा उत्पादन

राकेश पाण्डे* एवं पुतान सिंह**

डेयरी उद्योग ग्रामीण परिवेश में नियमित आय एवं रोजगार का मुख्य साधन है। चारा एव पशु आहार की लागत कुल दुग्ध उत्पादन लागत की 60–70 प्रतिशत होती है। अतः पशु पोषण की आवश्यकताओं की पूर्ति करने एवं दुग्ध उत्पादन की लागत को कम करने में हरे चारे का विशेष महत्व है। अदलहनी चारा फसलें जैसे मक्का, ज्वार, मकचरी, जई आदि ऊर्जा एवं दलहनी चारा फसलें प्रोटीन एव खनिजों की मुख्य स्रोत होती हैं। हरे चारे से पशुओं में कैरोटीन की पूर्ति होती है। दूध में विटामिन 'ए' हरे चारे के माध्यम से ही उपलब्ध होता है। निरन्तर घटती कृषि भूमि एवं चारा फसलों के अन्तर्गत घटते क्षेत्रफल के कारण उपलब्ध पशु आहार के लिये चारे पर अत्याधिक है। हरे चारे, सूखे चारे एवं दाने की आवश्यकता एवं उपलब्धता का अनुमानित आंकलन निम्न प्रकार है:–

चारे की स्थिति (मिलियन टन में)

वर्ष	चारे की उपलब्धता		चारे की माँग		चारे की कमी (प्रतिशत)	
	हरा चारा	सूखा चारा	हरा चारा	सूखा चारा	हरा चारा	सूखा चारा
2005	389.9	443	1025	569	61.96	22.08
2010	395.2	451	1061	589	62.76	23.46
2015	400.6	466	1097	609	63.50	23.56
2020	405.9	473	1134	630	64.21	24.81
2025	411.3	488	1170	650	64.87	24.92

स्रोतः पशुपालन एवं डेयरी पर पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत गठित कार्य समूह की ड्राफ्ट रिपोर्ट (2002–07 भारत सरकार, योजना आयोग, अगस्त 2001)

दाने की स्थिति (मिलियन टन में)

वर्ष	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	2006–07
दाने की उपलब्धता	41.96	43.14	44.35	45.63	48.27
दाने की माँग	117.44	120.52	123.59	127.09	130.55
दाने की कमी (प्रतिशत)	64.27	64.21	64.12	64.10	63.03

स्रोतः पशुपालन एवं डेयरी पर पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत गठित कार्य समूह की ड्राफ्ट रिपोर्ट (2002–07 भारत सरकार, योजना आयोग, अगस्त 2001)

उक्त विवरण से स्पष्ट है कि विभिन्न स्रोतों से उपलब्ध हरे चारे का अनुमानित उत्पादन 395.2 मि.टन, सूखे चारे का उत्पादन 461.0 मि.टन, तथा दाने की उपलब्धता 48.27 मि.टन (वर्ष 2006–07 में) है जबकि इनकी माँग क्रमशः 1061, 589 तथा 130.55

* विषय वस्तु विशेषज्ञ, फार्म अनुभाग
** प्रधान वैज्ञानिक, पशु पोषण विभाग

मिलियन टन है इस प्रकार हरे चारे, सूखे चारे एवं दाना रातव की उपलब्धता मे क्रमश: 62.7, 23.4 तथा 63.0 प्रतिशत की कमी है। वर्तमान में माँग एव आपूर्ति के इस अन्तर को पाटने के लिये तथा खाद्यान्नों पर मानव एव पशुओं की इस प्रतिस्पर्धा को कम करने के लिये वर्ष भर हरा चारा उत्पादन तकनीकियों के माध्यम से वैज्ञानिक खेती की आवश्यकता है। फसल चक्र के सिद्वान्तों का पालन करते हुये फसल चक्र में विभिन्न दलहनी (बरसीम, लोबिया, ग्वार आदि) एवं अदलहनी (जई, मक्का, ज्वार, बाजरा, मकचरी आदि) फसलों का इस प्रकार समावेश करना चाहिये कि प्रति इकाई अधिकतम उत्पादन लेते हुये भी मृदा स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव न पड़े। साथ ही समस्त संसाधनों जैसे पशुधन से प्राप्त गोबर, सिंचाई जल, उर्वरक आदि का बेहतर प्रबन्धन भी आवश्यक है। चारे के अन्तर्गत निरन्तर घटते क्षेत्रफल एव बढ़ती माँग को देखते हुये भविष्य में चारे की सघन खेती करते हुये अधिक उत्पादन देने वाली ऐसी फसलो तथा प्रजातियों का चयन करना होगा जिनका चारा भी अधिक पौष्टिक हो। वर्ष भर हरा चारा उत्पादन हेतु कुछ सघन फसल चक्र निम्नलिखित है:

1. बरसीम + सरसों – मक्का + लोबिया
2. मक्का + लोबिया – मक्का + लोबिया – जई – मक्का + लोबिया
3. बाजरा + ज्वार (2 कटाई) – एक वर्षीय ल्यूसर्न (6 कटाई)
4. ज्वार + लोबिया – जई – मक्का + लोबिया
5. ज्वार + लोबिया – बरसीम + सरसों – मक्का + लोबिया
6. ज्वार + बाजरा + लोबिया – ग्वार + ज्वार – जई + सरसों
7. मक्का + लोबिया – बरसीम + सरसों – मक्का+ लोबिया
8. मकचरी या ज्वार + लोबिया – बरसीम + जई – मक्का + लोबिया

चारा उत्पादन हेतु डेयरी फार्म की आवश्यकता एवं उपलब्ध संसाधनों के आधार पर वार्षिक कार्य योजना बनानी चाहिये जिसमें ली जाने वाली चारा फसलों की बुवाई तथा चारे की उपलब्धता का माहवार खाका निम्न प्रकार से बना लेना चाहिये। वर्ष भर हरे चारे की फसलों की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु माहवार निम्नलिखि फसलों को उगाना चाहिए:

क्र. स.	माह	चारा फसलों की बुवाई	हरे चारे की उपलब्धता
1.	जून–जुलाई	ज्वार, मक्का, बाजरा, ग्वार, लोबिया, नेपियर घास, दीनानाथ घास	मक्का, सूडान घास, नेपियर घास, बाजरा, एम.पी.चरी, तथा अन्य घासें और लोबिया
2.	अगस्त–सितम्बर	दीनानाथ घास, लोबिया, मकचरी, मक्का	ज्वार, मक्का, बाजरा, लोबिया, एम.पी.चरी, नेपियर घास इत्यादि
3.	अक्टूबर–नवम्बर	रिजका, बरसीम, चारे की सरसों, जई, आदि	ज्वार, लोबिया, दीनानाथ घास, मकचरी, नेपियर घास
4.	दिसम्बर–जनवरी	जई	बरसीम, रिजका, जई, सरसों, मकचरी
5.	फरवरी, मार्च	मक्का, सूडान घास, एम.पी.चरी, अन्य घासें और बाजरा	बरसीम, रिजका, जई
6.	अप्रैल, मई	ज्वार, मक्का, एम.पी.चरी, बाजरा, लोबिया	बरसीम, रिजका, जई, सूडान घास, एम.पी.चरी

अन्य चारा फसलों में शलगम, तिलहन में सरसों तथा बहुवर्षीय दलहनी फसलों में रिजका, स्टाइलो, राईस बीन आदि। इनके अलावा चारे के लिए नेपियर, गुइनियां, सटेरिये, दीनानाथ, अन्जन, धामन, मार्बल आदि बहुवर्षीय धासें भी उगायी जाती हैं। कुछ प्रमुख फसलों की उत्पादन तकनीकें निम्नलिखित हैं:–

खरीफ चारे की फसलें

ज्वार

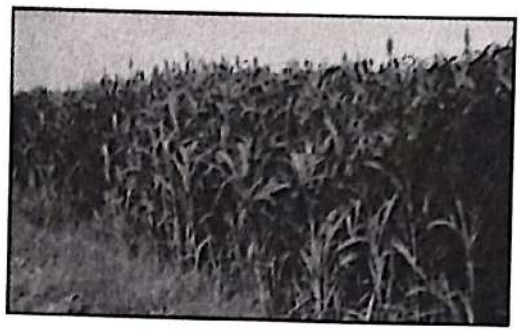

ज्वार को प्रायः सभी प्रकार अच्छी उर्वरा शक्ति वाली भूमियों में उगाया जा सकता है। अन्य चारा फसलों की अपेक्षा इसमें अधिक तापमान एवं सूखा सहन करने की क्षमता ज्यादा होती है अतः इसकी खेती ऐसे स्थानों पर लाभप्रद है जहाँ कम तथा अनियमित वर्षा होती है।

उन्नत प्रजातियाँः कटाई की संख्या के आधार पर प्रजातियों को मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा जा सकता है।

प्रजाति	उपयुक्त क्षेत्र	औसत उपज (टन/हैक्टअर)
1. एकल कटाई वाली किस्में		
पूसा चरी –6 पूसा चरी–9	सम्पूर्ण भारत	35–50
हरियाणा चरी–117, हरियाणा चरी–260 एस एल–44ए, एमपी चरी, यू.पी. चरी–2 (सलेक्शन–278)	उत्तरी भारत	35–45
यू.पी. चरी–1 (आई.एस.–4776)	उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र तामिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश	35–40
हरियाणा चरी–136, राज0 चरी–1 राज0 चरी–2	सम्पूर्ण भारत	37–50
पन्तचरी (यू.पी.एफ.एस.–23)	उत्तर प्रदेश	35–45
2. बहु कटाई वाली किस्में		
एस.एस.जी–988	सम्पूर्ण भारत	120–130
एस.एस.जी.–898	सम्पूर्ण भारत	120–130
एस.एस.जी–855	सम्पूर्ण भारत	120–130
पी.सी. 23, पी.सी.29	सम्पूर्ण भारत	100–110

बीज दरः ज्वार की अगेती तथा एकल कटाई वाली प्रजातियों के लिये 35–40 कि. ग्रा. बीज दर/हेक्ट. तथा बहु कटाई वाली किस्मों के लिये बीज दर 20–25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर रखते हैं यदि खेतों में खरपतवारों की समस्या अधिक है तो बीज दर थोड़ी ओर बढ़ा देते हैं।

बुवाई की विधि तथा समयः ग्रीष्म ऋतु में जल्दी चारा लेने के लिये मार्च के महीने में ज्वार की बहु–कटाई वाली प्रजातियों की बुवाई करते हैं। खरीफ में एकल कटाई वाली प्रजातियों की बुवाई जून–अगस्त में की जाती है। बुवाई सामान्यतया छिड़कवां विधि से की जाती है। लाइन में बुवाई हेतु 25–30 से.मी. की दूरी पर फसल को बोया जाता है।

खाद एवं उर्वरकः सिंचित क्षेत्रों में उगाई जाने वाली फसल में 60–80 कि.ग्रा. नत्रजन तथा 40–50 कि.ग्रा. फास्फोरस देना चाहिये। बहु कटाई वाली प्रजातियों में 80 से 100 कि.ग्रा. नत्रजन तथा 50–60 कि.ग्रा. फास्फोरस देना आवश्यक है। भूमि में पोटाश और जिंक की कमी होने की स्थिति में 40 कि.ग्रा. पोटाश तथा 10–20 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्ट. देना चाहिये इन तत्वों की एक तिहाई मात्रा को कार्बनिक तथा जैविक खादों से देने पर लागत में कमी आती है तथा उपज में भी बढ़ोत्तरी के साथ–साथ भूमि पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है। फास्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय दी जाती है। बहु कटाई वाली प्रजातियों में हर कटाई के बाद नत्रजन की टाफ ड्रेसिंग करना आवश्यक है।

सिंचाई एवं निराई गुड़ाईः ग्रीष्म ऋतु वाली फसल को 3 से 5 सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है। वर्षा ऋतु वाली फसल में प्रायः सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। सामान्यतया भूमि तथा फसल की माँग के अनुसार ही सिंचाई करें। यदि खरपतवारों की समस्या अधिक है तो बीज दर बढ़ाकर अथवा एट्राजिन एक कि.ग्रा. सक्रिय तत्व को 1000 ली. पानी में घोल बनाकर बुवाई के तुरन्त बाद छिड़काव करते हैं।

कटाईः चारे वाली ज्वार के तने पतले तथा पत्तियाँ अधिक होनी चाहिये। इसे बुवाई के 50–70 दिन बाद 50 प्रतिशत पुष्पावस्था पर काटना आरम्भ करते हैं। बहु–कटाई वाली किस्मों की पहली कटाई 50–60 दिन तथा बाद की कटाई 25–35 दिन के अन्तर पर करते हैं। इन किस्मों को जमीन से तीन या चार अंगुँल ऊपर से काटने पर कल्ले अच्छे निकालते हैं।

मक्का

मक्का के चारे में कार्बोहाइड्रेट व खनिज लवणों की मात्रा अधिक पायी जाती हैं साथ में विटामिन ए व ई भी पर्याप्त मात्रा में होते हैं। इसका साइलेज अच्छा वनता है। कम तापमान–कम आर्द्रता मे इसकी वृद्धि अच्छी होती है परन्तु अधिक तापमान–कम आर्द्रता मे इसकी वृद्धि रूक जाती है तथा पौधे जल जाते है।

उन्नत प्रजातियाँ

प्रजाति	उपयुक्त क्षेत्र	उपज (टन प्रति हे.)
अफ्रीकन टाल	सम्पूर्ण भारत	55–80
विजय कम्पोजिट, मोती कम्पोजिट	सम्पूर्ण भारत	35–47

खेत की तैयारीः एक जुताई मिट्टी पलट हल से तथा 3–4 जुताइयाँ हैरों से कर खेतों को बुवाई के लिये तैयार करते हैं। यदि भूमि में उपयुक्त नमी न हो तो पलेवा करके खेत की तैयारी करनी चाहिये।

बीज दरः बीज दर सामान्यतया 50–60 किलोग्राम प्रति हेक्टयर प्रयोग करते हैं लेकिन इसे 70 कि.ग्रा. प्रति हेक्ट. तक भी बढ़ाया जा सकता है।

बुवाई की विधि तथा समयः मक्का को मार्च से सितम्बर तक किसी भी समय बोया जा सकता है। इसकी बुवाई प्रायः छिटकाव विधि से की जाती है।

खाद एवं उर्वरकः सिंचित क्षेत्रों में उगाई जाने वाली फसल में 20 टन गोबर की खाद, 50 कि.ग्रा. नत्रजन, 30 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्ट. प्रयोग करनी चाहिये। गोबर की खाद खेत की तैयारी से पूर्व तथा 1/3 से आधी नत्रजन की मात्रा, पूरी फास्फोरस एवं पोटाश बुवाई के समय खेत में मिला देनी चाहिये। नत्रजन की शेष मात्रा को सिंचाई के बाद एक या दो बार में टाप ड्रेसिंग से देना चाहिये।

सिंचाई एवं निराई गुड़ाईः वर्षा कालीन फसल में प्रायः सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। ग्रीष्म कालीन फसल में आवश्यकतानुसार 3–4 सिंचाईयों की आवश्यकता होती हैं जिन्हें भूमि तथा फसल की माँग के अनुसार देना चाहिये। एट्राजिन एक कि.ग्रा. सक्रिय तत्व का 1000 ली. पानी में धोल बनाकर अंकुरण से पूर्व छिड़काव करने से खरपतवार नियन्त्रित रहते हैं।

कटाईः मक्का की कटाई, बुवाई के 60 से 70 दिन के बाद भुट्टे निकलते समय करनी चाहिये। अच्छी फसल से प्रजाति के अनुसार औसतन 40 से 50 टन प्रति हेक्ट. हरा चारा प्राप्त होता है।

बाजरा

बाजरा आमतौर पर कम वर्षा एवं कम उर्वरता वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है बाजरे में सूखा सहन करने की शक्ति ज्वार की तुलना में अधिक होती हैं। इसकी खेती 150 से 500 मि.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलातापूर्वक की जाती है।

उन्नत प्रजातियाँ

प्रजाति	उपयुक्त क्षेत्र	उपज (टन प्रति हे.)
जायन्ट बाजरा	महाराष्ट्र एवं मध्य भारत	35–45 (एक कटाई)
यू यू जे– एम.	बारानी क्षेत्र	30–47
टी.एन,एस.सी–1	तदैव	तदैव
एफ.एम.एच.–3 एच.बी.–1,3,4	सम्पूर्ण बाजरा क्षेत्र (बहुकटाई)	40–50

खेत की तैयारीः खेत में यदि उपयुक्त नमी न हो तो पलेवा कर एक गहरी जुताई मिट्टी पलट हल से करते हैं। इसके बाद– 2–3 जुताईयां हैरो से कर खेत को बुवाई के लिये तैयार करना चाहिये। नमी संरक्षित रखने के लिये हर जुताई के बाद पाटा लगा देना चाहिये।

बीज दरः बाजरे की चारा फसल के लिये बीज दर 15 से 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्ट. रखनी चाहिये।

बुवाई की विधि तथा समयः चारा फसल के लिये बाजरे की बुवाई प्रायः छिटकवाँ विधि से ही की जाती है। उत्तर भारत में इसकी बुवाई मार्च से अगस्त तथा दक्षिण भारत में फरवरी से नवम्बर तक कर सकते हैं।

खाद एवं उर्वरकः बाजरे की अच्छी उपज के लिये खेत की तैयारी से पहले गोबर की खाद खेत में मिलानी चाहिये। इसके अतिरिक्त 50 कि.ग्रा. नत्रजन, 40 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 30 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करना चाहिए। इसमें से 1/3 नत्रजन, पूरी फास्फोरस तथा पोटाश बुवाई के समय ही खेत में मिला देनी चाहिये। नत्रजन की शेष मात्रा एक यो दो बार में सिंचाई के बाद टाप ड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिये।

सिंचाई एवं निराई गुड़ाईः ग्रीष्म ऋतु वाली फसल में 3–4 सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती हैं वर्षा ऋतु की फसल में प्रायः सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। अधिक खरपतवार होने की दशा में फसल में एट्राजिन रसायन का एक कि.ग्रा. सक्रिय तत्व 1000 ली. पानी में घोल बनाकर अंकुरण से पूर्व प्रति हेक्ट. खेत में छिड़कने से खरपतवारों का नियन्त्रण होता है।

कटाई तथा उपजः चारे के लिये बाजरे की अच्छी फसल से औसतन 50–60 टन/हेक्ट. हरे चारे की उपज हो जाती है। इसकी कटाई का उपयुक्त समय बुवाई के 50–55 दिन बाद होता है।

मकचरी

मकचरी की खेती मक्का उगाने वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है परन्तु मक्का के विपरीत इसे अधिक वर्षा व अल्पकालीन जलभराव वाले स्थानों में भी सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

उन्नत प्रजातियाँः मकचरी इम्प्रूव्ड, देशी या स्थानीय किस्में।

खेत की तैयारी एंव बुवाईः 2–3 जुताई हैरो से करके खेत को भुरभुरा करके 40–45 कि. ग्रा. बीज/हैक्टेअर की दर से बुवाई करनी चाहिये। तथा बीज को 2–2.5 से.मी. गहराई पर दबाना चाहिये। गर्मियों में हरा चारा प्राप्त करने के लिये मार्च –अप्रैल तथा वर्षा ऋतु मे चारा प्राप्त करने के लिये जून –जुलाई में इसकी बुवाई करते हैं। फसल में दो कटाई भी प्राप्त की जा सकती हैं।

खाद एंव उर्वरकः बुवाई से 2–3 सप्ताह पूर्व 100–150 कु. गोबर की खाद तथा बुवाई के समय 30 किग्रा नत्रजन तथा 30 से 40 किग्रा प्रति हैक्टेअर फास्फोरस देना चाहिए। 30 कि.ग्रा. नत्रजन बुवाई के 30 दिन बाद तथा 30–40 किग्रा नत्रजन यदि दो कटाई लेनी हो तो पहली कटाई के बाद देना चाहिये।

सिंचाईः आवश्याकतानुसार 12–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिये। दूसरी कटाई वाली फसल में वर्षा न होने पर 15–20 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिये।

कटाई एवं उपजः फरवरी के अन्त में बोयी गई फसल मई के अन्त में कटाई के लिये तैयार होती है। 1.5–2.0 मी. ऊँचाई होने पर तथा दाना निकलने से पूर्व ही फसल काट लेनी चाहिए। इससे लगभग 600–700 कु. प्रति हैक्टेयर तक उपज प्राप्त होती है।

लोबिया

लोबिया की खेती भारत में दाने, हरे चारे, हरी सब्जी और हरी खाद के लिए की जाती है। लोबिया को चारे के लिए ज्वार, बाजरा, मकचरी व मक्का के साथ मिलाकर भी बोया जाता है जिससे यह ओर पौष्टिक हो जाता है। इसका प्रयोग सूखा चारा (हे) तथा साइलेज बनाने के लिए भी किया जाता है।

उन्नतशील प्रजातियाँ: हरे चारे के लिए लोबिया की प्रजातियाँ, दाने तथा फली के लिए उगायी जाने वाली किस्मों से बिल्कुल अलग होती हैं जिनकी उन्नत किस्में निम्नलिखित हैं:

प्रजाति	क्षेत्र	हरा चारा उत्पादन (टन/हे.)
रशियन जायन्ट	उत्तर भारत	30–35
ई.सी. 4216	उत्तर, पश्चिम और मध्य भारत	35–40
बुन्देल लोबिया–2	उत्तर, पश्चिम और मध्य भारत	35–40
यू.पी.सी. 287, 5286	सम्पूर्ण भारत	30–45
बुन्देल लोबिया–1	सम्पूर्ण भारत	30–45
यू.पी.सी.–5287	उत्तर भारत	35–45

उपरोक्त किस्मों के अतिरिक्त सिरसा–10, के–585, सी–88, एच.एफ.सी.42–1 आदि किस्में भी चारे के लिये उपयुक्त हैं।

बीज दर एवं बोने की विधि: चारे के लिए 30–40 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्ट. प्रयोग होता है। यदि लोबिया को मक्का या ज्वार के साथ मिलाकर बोते हैं तो इसकी बीज दर आधी कर देते हैं। छिटकवाँ विधि से बीज बोने पर बीज की मात्रा बढ़ा लेते हैं। वैसे बीज को 60–90 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में भी बोया जाता है।

बोने का समय: लोबिया की बुवाई मार्च से प्रारम्भ कर सितम्बर तक करते हैं।

खाद एवं उर्वरक: साधारणतया 20–25 कि.ग्रा. नत्रजन, 50–60 कि.ग्रा. फास्फोरस व 20–30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्ट. डाला जाता है। फास्फोरस के प्रयोग से चारे के गुणों में विकास व उपज में वृद्धि होती है।

सिंचाई एवं जल निकास: ग्रीष्मकालीन फसल में बुवाई के 15–20 दिन बार पहली सिंचाई करते हैं। इसके पश्चात 10–15 दिन के अन्तराल पर भूमि की किस्म के अनुसार सिंचाई करते रहते हैं। खरीफ में वर्षा न होने की स्थिति में सिंचाई करते हैं। गर्मियों में साधारणतया 3–4 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है।

कटाई: चारे के लिये फसल 60–70 दिन में तैयार हो जाती है। फली बनने से पूर्व काटा गया चारा अधिक नरम और स्वादिष्ट होता है। लोबिया की रशियन जाइन्ट किस्म में कटाई बुवाई के 50 दिन बाद करते हैं।

उपज: देशी प्रजातियों से लगभग 25 टन हरा चारा और उन्नतशील प्रजातियों से 30–40 टन हरा चारा प्रति हेक्ट. प्राप्त होता है।

रबी चारे की फसलें

जई

जई का प्रयोग प्राचीन काल से हरे एवं सूखे चारे के रूप में किया जाता है। इससे अच्छे गुणों वाला साइलेज भी तैयार होता है। इसकी फसल से तीन कटाईयां तक प्राप्त हो जाती हैं। रबी में बरसीम के पश्चात् जई का ही उत्तम स्थान है। जई की हरी पत्तियां प्रोटीन एवं विटामिन की धनी होती हैं।

उन्नतशील प्रजातियाँः

1. कैन्ट, ओ.एस.–6 और ओ. एस.–7: यह प्रजातियाँ सम्पूर्ण भारत के लिए उपयुक्त हैं जिससे 40–57 टन हरा चारा प्रति हेक्ट. प्राप्त होता है। इन प्रजातियों से एक से दो कटाईयां ली जाती हैं।
2. यू.पी.ओ.–94 और यू.पी.ओ. –212: यह प्रजातियाँ भी सम्पूर्ण भारत के लिए उपयुक्त हैं और यह बहुकटाई वाली किस्में हैं जिनसे 45–57 टन प्रति हेक्ट. तक उत्पादन प्राप्त होता है।

इनके अलावा ओ.एल.–9 उत्तर, उत्तर पश्चिमी एवं दक्षिणी पठार के लिए और बुंन्देल जई (जे. एच.ओ. 822 और 851) मध्य भारत के लिए उपयुक्त है जिनसे 40–50 टन हरा चारा प्रति हेक्ट. प्राप्त होता है।

भूमि की तैयारीः खरीफ की कटाई के पश्चात् पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से व 3–4 जुताईयां हैरो, कल्टीवेटर या देशी हल से करते हैं तथा हर बार पाटा लगाया जाता है।

बीज दरः 80–100 कि.ग्रा. बीज दर प्रति हेक्ट. थीरम/केप्टान कवकनाशी से उपचारित कर बोना चाहिए। कम उपजाऊ वाली मृदा में बीज मात्रा अधिक प्रयोग करनी चाहिये।

अन्तरणः सामान्यतः पंक्तियों के बीच का अन्तरण 20–25 से.मी. रखते हैं। बीज को 5–6 से.मी. गहराई पर नमी के सम्पर्क में बोते हैं।

बुवाई का समय एवं विधिः जई की बुवाई अक्टूबर से फरवरी तक की जाती है वैसे बुवाई शीघ्र करने पर कटाईयां अधिक मिलने से उपज अच्छी मिलती है। जई की बुवाई छिटकावां विधि के साथ–साथ पंक्तियों में सीड़ड्रील से की जाती है।

खाद एवं उर्वरकः खाद की मात्रा को मृदा परीक्षण के आधार पर प्रयोग किया जाता है। सामान्यतया चारे वाली फसल के लिए 100–120 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 क्रि.ग्रा. फास्फोरस व 30 क्रि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्ट. प्रयोग किया जाता है। नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा को बुवाई के समय ही दिया जाता है। नत्रजन का शेष भाग दो किस्तों में फसल की बुवाई के 25 दिन बाद (पहली सिंचाई के समय) व बाकी पहली कटाई के बाद डालते हैं।

सिंचाईः सिंचाईयों की संख्या बुवाई के समय, मृदा के प्रकार एवं जलवायु पर निर्भर करती है। वैसे पहली सिंचाई बुवाई के 25 दिन बाद की जाती है तथा बाद वाली सिंचाईयां 15–20 दिन के अन्तराल पर करते हैं।

कटाईः जई की फसल की कटाई कई बार की जाती है फसल में बाली आने से पूर्व ही फसल को काट लिया जाता है। कटाईयों की संख्या मुख्य रूप से फसल की प्रजाति, बुवाई का समय, मृदा उर्वरता तथा सिंचाई सुविधा पर निर्भर करती है। समान्यतः कटाई 50 प्रतिशत फूल की अवस्था पर करने से उपज अधिक मिलती है। यह अवस्था बुवाई के 55–60 दिन पर आ जाती है इस समय पौधे 60–65 से.मी. लम्बे होते हैं। दूसरी कटाई पहली कटाई के 30–35 दिन पर की जाती है तथा तीसरी कटाई बीज पकने पर करते हैं। इससे चारे के साथ–साथ दाना भी प्राप्त होता है।

उपरोक्त तकनीकियों के माध्यम से जई का 45 से 60 टन हरा चारा प्रति हेक्टयर प्राप्त किया जा सकता है। यदि फसल प्रथम कटाई के बाद दाने के लिए छोड़ते हैं तो 25 टन हरा चारा, एक टन दाना व दो टन भूसा प्राप्त होता है।

बरसीम

बरसीम रबी चारे की मुख्य फसल है। इसके चारे में प्राटीन की मात्रा अधिक होती है। दलहनी फसल होने के नाते यह मृदा उर्वरकता में वृद्धि करती है। बरसीम से उत्तम किस्म की साइलेज भी तैयार की जाती है। भारत में बरसीम की फसल सन् 1904 में सर प्लोचर द्वारा सर्वप्रथम मीरपूर खास फार्म (सिंध) में उगाई गयी। उत्तर भारत में यह हरे चारे की प्रमुख फसल है। बरसीम की अच्छी वृद्धि के लिए अर्ध शुष्क एवं ठंड़ी जलवायु की आवश्यकता होती है। 150 से.मी. से कम वार्षिक वर्षा वाले स्थानों पर यह सफलतापूर्वक उगायी जाती है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जड़ों में उपस्थित जीवाणु निष्क्रिय हो जाते हैं और जड़ें सड़ जाती हैं तथा कम वर्षा वाले स्थानों में सिंचाई की अच्छी व्यवस्था की आवश्यकता होती है। अधिक तापमान एवं अधिक वर्षा के कारण दक्षिणी भारत की जलवायु बरसीम के लिए उपयुक्त नहीं है।

भूमिः बरसीम वाली भूमियों में जल निकास एवं वायु संचार प्रबन्ध अच्छा होना चाहिये। उपजाऊ दोमट भूमियां इस फसल के लिए सबसे उत्तम होती हैं। धान की भारी मृदाओं में भी बरसीम की फसल सफलतापूर्वक उगाई जाती है। क्षारीय भूमियों पर भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है लेकिन अम्लीय भूमियों में बरसीम की खेती सम्भव नहीं है।

उन्नशील प्रजातियाँ

प्रारम्भ में उन्नतशील प्रजातियाँ देशी प्रजातियों की तुलना में अधिक उपज देती हैं व बाद में अधिक तापमान बढ़ने पर उपज कम हो जाती है। अतः चारे की अधिक मात्रा प्राप्त करने के लिए उन्नतशील व देशी प्रजातियों के बीज को 1:2 के अनुपात में मिलाकर बोना चाहिए।

प्रजाति	क्षेत्र	हरा चारा उत्पादन (टन/हे.)
मेसकावी	बरसीम उगाने का सम्पूर्ण भाग	70–90
वरदान	बरसीम वाला सम्पूर्ण क्षेत्र	80–110
बी0एल0–1, 10	पंजाब, हिमाचल प्रदेश व जम्मू	80–100
बुन्देल बरसीम–2	मध्य और उत्तर पश्चिमी भाग	80–105
बी0एल0–22	पहाड़ी, उत्तर पश्चिम भाग	80–115
जे0बी0–1, 2, 3	मध्य भारत, उत्तर प्रदेश	70–95

भूमि की तैयारीः बरसीम का बीज आकार में छोटा होता है अतः अच्छे अंकुरण के लिए खेत की अच्छी तैयारी आवश्यक है। खरीफ की फसल की कटाई के बाद एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई कर 3–4 बार देशी हल या हैरों से मिट्टी को भुरभुरी बना लेते हैं। प्रत्येक बार पाटा चलाकर खेत को समतल भी किया जाता है।

बीज एवं बीज दरः साधारणतः बरसीम के बीज के साथ कासनी के बीज भी मिले होते हैं इनको अलग करने के लिये 5 प्रतिशत नमक के घोल में बरसीम के बीजों को ड़ालते हैं। कासनी के बीज हल्के होने के कारण घोल के ऊपर तैरने लगते हैं इनको घोल से अलग करके बीज को स्वच्छ पानी से कई बार धोते हैं। अधिक उपज प्राप्त करने के लिए बरसीम के बीजों को *राइजोबियम ट्राईफोलाई* नामक बैक्टीरिया के कल्चर से उपचारित किया जाता है इसके लिए कल्चर को एक लीटर पानी व 100 ग्राम गुड़ के घोल में मिला लिया जाता है। एक हेक्ट. खेत के लिए प्रयोग होने वाले बीज की मात्रा को इस कल्चर के साथ मिलाकर छाया में सुखाकर 24 घंटे के अन्दर बुवाई कर दी जाती है।

बरसीम का कल्चर उपलब्ध न होने पर बरसीम के पूर्व खेत की 5–6 से.मी. ऊपरी सतह की 4–5 कुन्तल मिट्टी प्रति हेक्ट. नये खेत में समान रूप से बिखेर देनी चाहिए। बीज दर 25–30 कि.ग्रा./हेक्ट. प्रयोग की जाती है देशी किस्म का बीज छोटा होने के कारण 25 कि.ग्रा. व उन्नत किस्मों का आकार बड़ा होने के कारण 30 कि.ग्रा. प्रति हेक्ट. प्रयोग किया जाता हैं। प्रारम्भ में अधिक उपज लेने के लिए बरसीम के बीज के साथ सरसों या लाही अथवा गोभिया सरसों (2–4 कि.ग्रा.) जई या सैंजी (40–50 कि.ग्रा.) के बीज को भी मिलाकर बोया जाता है।

बोने का समय एवं विधिः बरसीम की बुवाई खेत में 5–7 से.मी. पानी भरने के बाद की जाती है। इस विधि में खेत में पानी भरकर पटेला द्वारा गंदल कर लिया जाता है फिर छिटकवां विधि से बुवाई कर देते हैं। बुवाई का उत्तम समय अक्टूबर माह है।

खाद एवं उर्वरकः बरसीम की फसल में 30 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस व 30 कि.ग्रा. प्रोटाश प्रति हेक्ट. की आवश्यकता होती है। इन खादों की पूरी मात्रा को अन्तिम जुताई के समय खेत में छिड़ककर मिला देना चाहिए।

सिंचाई एवं जल निकासः प्रारम्भ में अच्छे अंकुरण एवं वृद्धि के लिए 7–10 दिन के अन्तर पर हल्की–2 दो सिंचाइयां देना लाभदायक है। बाद में मृदा एवं मौसम के अनुसार 15–20 दिन के अन्तराल पर सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। प्रत्येक कटाई के पश्चात् सिंचाई आवश्यक होती है। साधारणतया कुल 12–15 सिंचाईयाँ पर्याप्त होती हैं। अधिक जलभराव की अवस्था में पानी की निकासी आवश्यक है।

कटाईः बरसीम की पहली कटाई फसल की बुवाई के 50–60 दिन बाद कर सकते हैं। इसके बाद 25–30 दिन के अन्तर पर कटाई की जाती है। पौधों को जमीन की सतह से 5–7 सेमी की ऊँचाई पर काटना चाहिए। बरसीम से प्रति हेक्ट. 100–120 टन तक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। फरवरी के बाद फसल को बीज के लिए छोड़ने पर 4–5 कुन्तल बीज व 40–60 टन हरा चारा प्रति हेक्ट. तक प्राप्त हो जाता है।

ल्युसर्न या रिजका

ल्युसर्न चारे की एक बहुवर्षीय फसल है अतः इससे ग्रीष्मकाल में भी हरा चारा प्राप्त होता रहता है। ल्युसर्न में काफी गहराई से पानी सोखने की क्षमता होती हैं। इसका चारा भी बरसीम के समान पौष्टिक होता है लेकिन गरम होता है। अतः गाभिन जानवरों को लुसर्न नहीं खिलाया जाता है वैसे भी इसे अधिक मात्रा में नहीं खिलाना चाहिए क्योंकि इससे पशुओं में अफारा हो जाता है घोड़ों के लिए ल्युसर्न का चारा विशेष रूप से उपयुक्त होता है। ज्वार की अपेक्षा इसके चारे में 5 गुना अधिक प्रोटीन और विटामिन एवं कैल्शियम भी भरपूर होता है। इसे साइलेज के लिऐ भी प्रयोग करते हैं। यह दलहनी होने के कारण मृदा उर्वरकता बढ़ाता है।

ल्युसर्न की खेती अधिकतर उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब व महराष्ट्र में की जाती है। ल्युसर्न की फसल को शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। 100 से.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र ल्युसर्न की खेती के लिए उपयुक्त हैं। ल्युसर्न की फसल में ताप की विभिन्न अवस्थाओं को सहन करने की क्षमता होती है। अधिक नमी की अवस्था में पौधों की वृद्धि रूक जाती है।

भूमिः दोमट मृदा फसल के लिए उत्तम है लेकिन बलुई दोमट से चिकनी भूमियों पर भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। ल्युसर्न के लिए जल निकास का प्रबन्ध होना आवश्यक है।

उन्नतशील प्रजातियाँः सम्पूर्ण लुसर्न उगाने वाले क्षेत्रों के लिए सिरसा टाइप–9 (बहुवर्षीय) और एल.एल.सी.–3 (एक वर्षीय) प्रमुख किस्में हैं जिनसे 80–105 टन तक हरा चारा प्रति हेक्ट. प्रति वर्ष प्राप्त होता है। एल.एल.सी.–5 व आनंद–3 भी एक वर्षीय किस्में हैं। जिनसे 70–105 टन/हेक्ट. तक हरा चारा प्राप्त होता है। इनके अलावा सिरसा टाईप–8 (एक वर्षीय) एन.डी.आर.आई. सेलेक्शन–1 (बहुवर्षीय) प्रजातियाँ हैं जो उत्तर भारत के लिए उपयुक्त हैं और 60–80 टन तक हरा चारा प्रति हेक्ट. देती हैं।

खाद एवं उर्वरकः ल्युसर्न की (बहुवर्षीय) फसल से लगातार लगभग 4–6 वर्षों तक पर्याप्त मात्रा में हरा चारा प्राप्त होता रहता है। अतः फसल की बुवाई के समय 30 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फस्फोरस व 20 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग प्रति हेक्ट. लाभदायक होता है। दो–तीन वर्षों में एक बार 10 कुन्तल चूना, बोरोन की कमी वाले खेतों में 40–50 कि. ग्रा. बोरेक्स प्रति हेक्ट. मिलाने से उपज में अच्छी वृद्धि होती है। कैल्शियम की पूर्ति हेतु 50 ग्राम सोडियम मोलिबिडेट को 500 लीटर पानी में घोलकर छिडकाव से उपज में वृद्धि होती है।

बुवाई का समय एवं विधिः ल्युसर्न की बुवाई देश के विभिन्न भागों में सितम्बर से अक्टूबर तक की जाती है। एक वर्षीय ल्युसर्न की बुवाई छिटकवां विधि से की जाती है। बहुवर्षीय लुसर्न की बुवाई मेड़ों पर की जाती है। इसमें 30 से.मी के अन्तर पर 60 से.मी. चौडी मेंड़ बनायी जाती है।इन मेडों पर 10 से.मी. के अन्तर पर ल्युसर्न के बीज की बुवाई की जाती

है। मेडों की ऊँचाई 12–15 से.मी. रखते हैं। बीज को 2–3 से.मी. की गहराई पर बोया जाता है।

बीज की मात्रा एवं उपचारः छिटकवां विधि में बीज दर 12–15 कि.ग्रा. व मेड़ों पर बुवाई (हावर्ड विधि) में 10–12 कि.गा. प्रति हेक्ट. प्रयोग की जाती है। बरसीम के समान ही ल्युसर्न के बीज को *राइजोबियम मेलीलोटाई* नामक जीवाणु के क्ल्चर से उपचारित करना चाहिए।

सिंचाई व जल निकासः हल्की भूमियों में अधिक व भारी भूमियों में कम सिंचाईयों की आवश्यकता होती है इस फसल की जड़ें लम्बी होने के कारण मृदा में गहराई से भी पानी शोषित करती हैं। वैसे ग्रीष्म काल में 10–12 दिनों के अन्तर पर और सर्दियों में 20–25 दिन के अन्तराल पर सिंचाईयां करते हैं। वर्षा ऋतु में सिचाई की आवश्यकता प्रायः नहीं होती है।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवारः एक वर्षीय फसल में खरपतवार की समस्या नहीं होती है लेकिन बहुवर्षीय फसल में निराई–गुड़ाई करना आवश्यक होता है। अमरबेल प्रभावित क्षेत्रों में कब नामक रसायन की एक कि.ग्रा. मात्रा को 1000 लीटर पानी के साथ अमरबेल के अंकुरण के बाद छिड़काव किया जाता है।

कटाई एवं उपजः कटाई बुवाई के 60–70 दिन के बाद की जाती है। इसके पश्चात फसल की वृद्धि तेज होती है और अगली कटाईयां 25–30 दिन के बाद 10–12 प्रतिशत फूल आने की अवस्था पर की जाती हैं। सामान्य अवस्थाओं में प्रति वर्ष 8–9 कटाईयां हो जाती हैं। उन्नतशील प्रजातियों की खेती से वर्षभर में 80–110 टन तक हरा चारा प्रति हेक्ट. प्राप्त हो जाता है। दो कटाईयां कम लेकर 2–4 कु. प्रति हेक्ट. बीज उत्पादन भी किया जा सकता है।

बहुवर्षीय चारा फसल

नेपियर घास

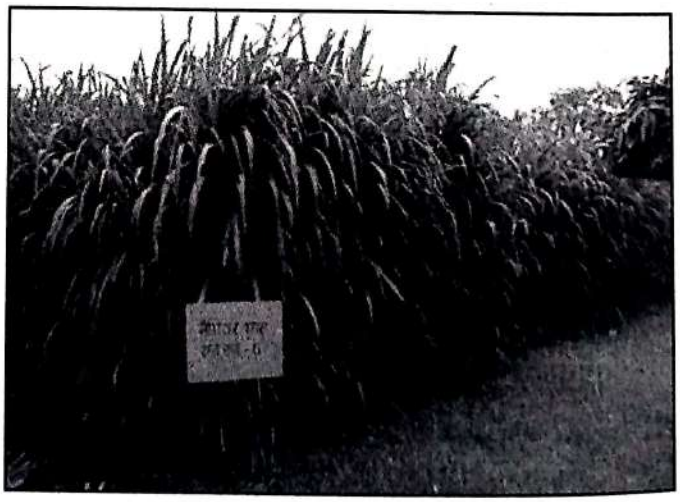

नेपियर घास के लिये अच्छे जल निकास वाली दोमट या बलुई दोमट मृदा सर्वोत्तम होती है। यह गर्म जलवायु के अतिरिक्त ठंडे स्थानों पर भी (पाले तथा जलभराव वाले क्षेत्रों को छोड़कर) सफलता पूर्वक उगाई जा सकती है। यह बहुवर्षीय घास है जिसे 4–5 वर्ष तक एक खेत में उगाने के बाद खेत बदल देना चाहिये। नवम्बर से फरवरी तक इसकी वृद्धि कम या नहीं के बराबर होती है।

उन्नत किस्में: पूसा जायन्ट नेपियर, एन बी–21, एन. बी.–9, सी.ओ.–3, एन.एच.–6, एन. एच.–9, एन.एच.–21 ।

खेत की तैयारी एवं बुवाईः मिट्टी पलट हल या हैरो से खेत की गहरी जुताई कर मृदा को भुरभुरा व समतल बनाकर 12000–14000 जड़ अथवा तने के टुकड़ो को प्रति हैक्टेयर

की दर से लाइन से लाइन की दूरी 90–100 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 60 से.मी. रखते हुये लगाते हैं। तने की कटिंग को 45 डिग्री के कोण पर इस प्रकार लगाते हैं कि उसकी एक गाँठ भूमि के भीतर तथा एक गॉठ भूमि के ऊपर रहे। बुवाई का उचित समय 15 फरवरी से जून के अन्त तक है।

खाद एवं उर्ववरकः बुवाई से 2–3 सप्ताह पूर्व 125–150 कु. गोबर की खाद खेत में डालनी चाहिए इसके अतिरिक्त अन्य पोषक तत्व मृदा जॉच के आधार पर देने चाहिये। 50–60 किग्रा नत्रजन बुवाई के समय तथा प्रत्येक कटाई के पश्चात् 15–20 किग्रा नत्रजन प्रति है0 की आवश्यकता पड़ती है।

सिंचाईः ग्रीष्म ऋतु में 10–12 दिन एवं शरद ऋतु में 15–20 पश्चात् सिंचाई करनी चाहिये। प्रत्येक कटाई के पश्चात् सिंचाई करने से पुनर्वृद्धि अच्छी होती है।

कटाईः पहली कटाई 80–90 दिन पर तथा इसके पश्चात् 45–60 दिन पर करते हैं। कटाई भूमि से 15–20 से.मी. ऊपर करने से पुनर्वृद्धि अच्छी होती है।

उपजः संकर नेपियर की किस्मों से 1200–1600 तथा नवीन किस्मों से 2000 कु./है0 से भी अधिक हरा चारा प्रति वर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

हरा चारा संरक्षण एवं उसका उपयोग

हरे चारे के बेहतरीन प्रबन्धन के बाद भी वर्ष में एक अथवा दो बार (मार्च–अप्रैल तथा नवम्बर–दिसम्बर) ऐसा समय आता है जब इसकी उपलब्धता मे कमी महसूस होती है। ऐसे समय के लिये हरे चारे की अधिकता के समय इसको संरक्षित करके रख लेते हैं। इसके लिये चारे की कटाई ऐसी अवस्था पर करते हैं जब चारे में पोषक तत्व अधिकतम रहते हैं। संरक्षित चारे में अधिकांश पोषक तत्व सुरक्षित रहते हैं। इसे आवश्यकतानुसार निम्न विधियों से सरंक्षित कर भण्डारित करते हैं।

(अ) साईलेज बनाकर

(ब) 'हे' बनाकर

(स) 'फीड ब्लाक' बनाकर

(अ) साइलेज (आचार): एक गंधहीन, समान रंग एवं नमी वाला वह पदार्थ (चारा) है जो हवा रहित साइलों/गड्ढों में पूर्ण किण्वन के पश्चात निम्नतर पोषक तत्वों का ह्रास किए बिना प्राप्त होता है। साइलेज में किण्वन विधि दो प्रकार से होती है। प्रथम चारे में भण्डारण के दौरान स्वयं बने कार्बनिक अम्ल द्वारा और दूसरे भण्डारण में प्रयुक्त अम्ल अथवा परिरक्षी (प्रिजरवेटिवज) के माध्यम से। अदलहनी चारों में प्रोटीन की मात्रा कम होती है इसलिए साइलेज को अधिक प्रोटीनयुक्त बनाने के लिए इस तरह के चारों में 3–4 किग्रा यूरिया को प्रति टन चारे की दर से साइलों में बुरकाव करते हैं। इसके विपरीत दलहनी चारों में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा कम पायी जाती है। ऐसी फसलों में कार्बोहाइड्रेट एवं लेक्टिक अम्ल बढ़ाने के लिए शीरे की 5–10% मात्रा मिला दी जाती है।

साइलेज बनाने का विधिः साइलेज के लिए पौधों को 2 सेमी की कुट्टी काटने के बाद जमीन में बने गड्ढ़े या जमीन के ऊपर विशेष रूप से बनाये गये ढेर में जिन्हें साइलो कहते हैं, दबा–दबाकर वायु रोधी स्थिति में रखा जाता है। साइलो विभिन्न प्रकार के होते हैं जैसे बंकर साइलो, गड्ढ़ा साइलो, नाली साइलो, स्टेक्स एवं कलैम्प साइलो, टावर

साइलो, वैक्यूम साइलो आदि। आमतौर पर किसान गड्ढ़ा साइलो का ही प्रयोग करते हैं। यह साइलो जमीन में एक गोल या समकोण चतुर्भज के आकार का गड्ढ़ा खोदकर बनाया जाता है। एक छोटे किसान की आवश्यकता के लिए 2.8 मीटर व्यास और 3.6 मीटर गहराई वाले गोल गड्ढ़े पर्याप्त होते हैं जिसमें साढ़े पाँच टन (55 कुन्तल) हरा चारा संरक्षित किया जा सकता है।

साइलेज बनाने योग्य फसलें: सभी चारे की फसलों को साइलेज बनाने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता हैं। चारे की फसलें जैसे ज्वार, मक्का, बाजरा, मकचरी, जई तथा घासें जैसे गिनी, सूडान और नेपियर साइलेज बनाने के लिए उपयुक्त समझी जाती है इनके अलावा बरसीम, ल्युसर्न, सोयाबीन, लोबिया, ग्वार आदि फसलों से भी उत्तम किस्म का साइलेज तैयार होता है। गन्ने का अंगोला, चुकन्दर व शकरकन्द का तना, मटर आदि का तना भी साइलेज बनाने के काम आता है।

अच्छी साइलेज के गुण: एक अच्छी साइलेज को पशु कुछ दिन के पश्चात बडे चाव से खाने लग जाते हैं। हरे चारे में 5 प्रतिशत नमक मिला देने से साइलेज का स्वाद अधिक अच्छा हो जाता है। अच्छी प्रकार से बनायी गई साइलेज में हरे चारे का 80–85 प्रतिशत तक पोषकमान सुरक्षित रहता है। अच्छी साइलेज में गंध नहीं होती है। गंध युक्त साइलेज खराब माना जाता है। अच्छे साइलेज का पी एच मान 4 से 4.2 तक बना रहता है। साइलों में लेक्टिक अम्ल बढ़ाने के लिए 3.5 किग्रा कार्बन बाई सल्फाईट प्रति 71 घनफुट की दर से चारे में मिलाया जाता है साइलों की किण्वन क्रिया एवं उसमें अवायवीय स्थिति पैदा करने के लिए क्रमशः सल्फर डाई आक्साइड 2–3 किग्रा प्रति टन चारा और 2 किग्रा सोडियम मैटाबाईसल्फाइट प्रति टन हरा चारा की दर से प्रयोग किया जाता है।

साइलेज खिलाना: अच्छी प्रकार से भरे हुए साइलों में साइलेज लगभग दो से तीन माह में खिलाने के लिए तैयार हो जाता है। खिलाने के लिए साइलो का एक हिस्सा खोलते हैं तथा नीचे से ऊपर तक का पूरा टुकड़ा एक साथ निकालते हैं राशन में 15 से 20 कि. ग्रा. साइलेज प्रति पशु खिलाया जा सकता है। साइलेज के लिए अभ्यस्त होने में पशुओं को कुछ दिन लगते हैं, इसलिए शुरू में पशु एक दो दिन तक इसको न भी खाये तो निराश नहीं होना चाहिए। यदि साइलेज पशुओं के रहने वाले स्थान पर ही खिलाया जाता है तो इसे दोहन के बाद खिलाना चाहिए ताकि दूध में साइलेज की गन्ध न जा सके।

साइलेज बनाने में सावधानियाँ: साइलों को भरते समय कटे हुए चारे को पूरे क्षेत्रफल में पतली–पतली एक समान पर्तों में फैलाकर व दबा–दबा कर अच्छी तरह से भरना चाहिए ताकि अधिकांश हवा बाहर निकल जाये। साइलो को भरने में कम से कम समय लगाना चाहिए। साइलों का कम से कम 1/6 भाग प्रतिदिन भर जाना चाहिए, जिससे कि साइलों अधिक से अधिक 6 दिन में पूरा भर जाए। साइलों को काफी ऊँचाई तक भरना चाहिए जिससे कि बैठाव के बाद भी चारे का तल किनारे की दीवारों से काफी ऊँचा रहे। ऐसा करना इसलिए जरूरी होता है, क्योंकि किण्वन की क्रिया से चारे में अधिक सिकुड़न होती है। साइलों के अन्दर हवा व पानी बिल्कुल नहीं जाना चाहिए। साइलेज को पोलीथीन की चादर से चारों तरफ से ढ़ककर उसके ऊपर 30 से.मी. मोटी मिट्टी की पर्त डालकर पानी से लीप देना चाहिए। साइलेज बनाने के लिए ज्वार, मक्का व सुडान घास को दुग्धावस्था पर, जई को दुग्धावस्था या पुष्पावस्था पर, ल्युसर्न को 35 दिन की

अवस्था पर और सोयाबीन को फसल की परिपक्वता पर काटते हैं। यानि आमतैर पर 28 प्रतिशत शुष्क भार की अवस्था पर फसल कटाई की जाती है।

(ब) 'हे':

यह सुखाया हुआ चारा होता है जोकि तैयार किये जाने के बाद, पोषकमान में बिना किसी विशेष हानि के गोदाम में रखा जा सकता है। सुखाने की क्रिया बहुत तेजी से होनी चाहिए। उत्तर भारत में 'हे' तैयार करने का समय साधारणतः मार्च–अप्रैल होता है। इस समय धूप में तेजी होती है और वायुमण्डल में आद्रता कम होती है।

हे बनाने की विधिः हे बनाने की क्रिया में चारे को अच्छी प्रकार और समान रूप से सुखाना बहुत आवश्यक होता है। भारत में साधारणतः धूप या हवा में सुखाकर ही 'हे' तैयार करते हैं। इस विधि में खड़े चारे को खेत से काटने के बाद जमीन पर 25–30 से. मी. मोटी सतहों या छोटे–छोटे ढ़ेरों में फैलाकर धूप में सुखाया जाता है। यदि धूप अधिक तेज न हो तो हरे चारे को अधिक पतली सतहों में फैलाते हैं। जब पौधों की अधिकांश ऊपरी पत्तियां सूख जाती है और कुछ कुरकुरी हो जाती हैं तो चारे को इकट्ठा कर 5 कि.ग्रा. भार तक के ढ़ेर बना लेते हैं। जैसे ही छोटे ढ़ेरों के ऊपर वाले पौधों की पत्तियाँ

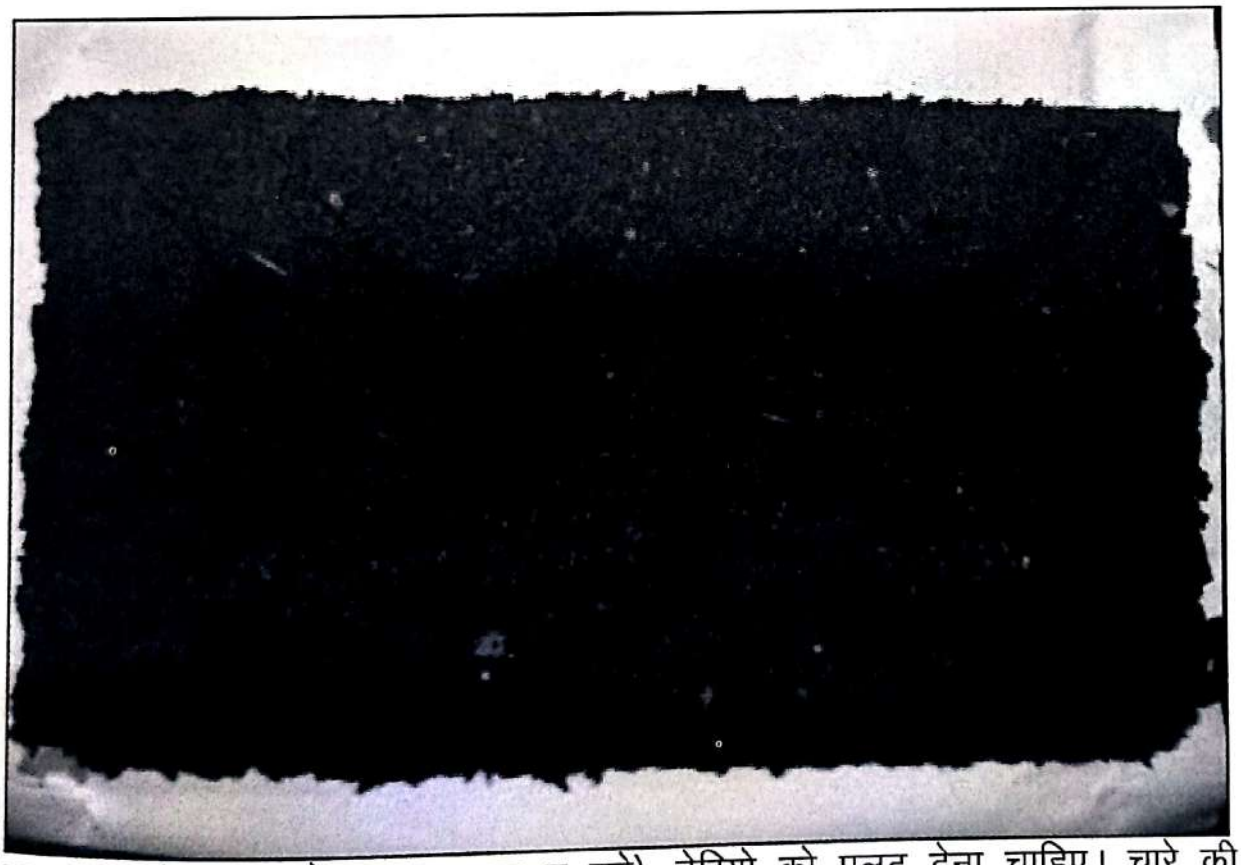

सूख जाए (परन्तु मुडने पर एक दम न टूटे), ढ़ेरियो को पलट देना चाहिए। चारे की ढेरियों को ढ़ीला रखा जाता है, जिससे उसमें हवा पास होती रहे। 15 से 20 प्रतिशत नमी तक ढ़ेरों को सूखा कर बाद में इकट्ठा कर लेते हैं और यदि कटाई हेतु तुरन्त आवश्यकता न हो तो बाड़े/ गोदाम/ छप्पर में जमा कर लेते हैं।

'हे' बनाने योग्य फसलें: बरसीम, रिजका, लोबिया, सोयाबीन, जई, सुडान आदि से अच्छी 'हे' तैयार होती है। अक्टूबर में मक्का और ज्वार से भी 'हे' तैयार किया जा सकता है।

हे बनाने में सावधानियाँः पतले मुलायम तनों तथा अधिक पत्तियों वाली घासों का 'हे' सख्त घासों की अपेक्षा अच्छा होता है। फसलों के काटने की अवस्था का 'हे' के गुणों पर काफी प्रभाव पड़ता है। साधारणतः 'हे' बनाने के लिए कटाई पुष्पावस्था के प्रारम्भ में

करनी चाहिए। अधिक पकी हुई फसलों से तैयार किया हुआ 'हे' अच्छा नहीं होता है। अधिक पकने पर अपरिष्कृत प्रोटीन, कैल्शियम, फास्फोरस व पोटाश की मात्रा तनों में कम हो जाती है। फसल कटाई की प्रक्रिया तेजी से करनी चाहिए। फसल की कटाई सुबह 8–10 बजे के बाद ओस समाप्त हो जाने पर ही करना चाहिए। चारा अधिक सुखाने से प्रोटीन तथा कैरोटीन तत्वों की हानि होती है जबकि कम सुखाने से भण्डारण के दौरान ताप पैदा होता है। जिससे उसका पोषकमान कम हो जाता है।

(स) 'फीड ब्लाक' बनाकरः फार्म में उपलब्ध सूखा चारा, भूसा, सूखी पत्तियॉ आदि को संरक्षित एवं भण्डारित किया जा सकता है मगर सूखा चारा एवं भूसा बहुत अधिक स्थान घेरते है अतः भण्डार की समस्या पैदा होती है। इस समस्या से निबटने के लिये भूसा, सूखे चारे, तथा पत्तियों को ऐसे ही अथवा चोकर, खनिज मिश्रण, शीरा आदि मिश्रित करके मशीन द्वारा उच्च दबाव पैदा करके चारे के ब्लॉक बनाये जाते हैं जो आकार मे छोटे हो जाते हैं। इन्हें छोटे स्थान पर संरक्षित तथा आसानी से स्थानान्तरित भी किया जा सकता है। इस तरह से संरक्षित चारे को पशु बड़े चाव से खाते हैं।

संरक्षण एवं निर्देशनः
डा. त्रिवेणी दत्त
संयुक्त निदेशक (प्रसार शिक्षा),
भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान,
इज्जतनगर–243 122 (उ.प्र.)

सम्पादकः
डा. (श्रीमती) रुपसी तिवारी
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रभारी, कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र,
भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान,
इज्जतनगर–243 122 (उ.प्र.)

प्रकाशकः
डा. महेश चन्द्र शर्मा
निदेशक व कुलपति,
भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान,
इज्जतनगर–243 122 (उ.प्र.) के निमित्त प्रभारी अधिकारी,
संचार केन्द्र द्वारा प्रकाशित

संस्करणः
2010

मुद्रकः
बाइट्स एण्ड बाइट्स, बरेली
फोनः 94127 38797

INDIAN VETERINARY RESEARCH INSTITUTE
Izatnagar-243 122 (UP) INDIA
Phone: +91-581-2300096 (O); +91-581-2302231 (R)
Fax: +91-581-2303284; E.mail: dirivri@ivri.up.nic.in
Website: www.ivri.nic.in; Gram: VETEX
Kisan Call Center: 1800-180-1551; Helpline: +91-581-2311111